ज्ञान तत्व कमांक–378

मंथन क्रमांक –98 विभाजन का दोषी कौन

कुछ सिद्धान्त है।

1 प्रवृत्ति के अतिरिक्त किसी भी प्रकार का वर्ग निर्माण विभाजन का आधार होता है। वर्ग निर्माण से गुट बनते है, आपस मे टकराते है और अंत मे विभाजन होता है।

2 किसी भी प्रकार की सत्ता हमेशा वर्ग निर्माण और वर्ग विद्वेष का प्रयत्न करती है। वर्ग संघर्ष सत्ता के सशक्तिकरण का मुख्य आधार होता है। इसे ही बांटो और राज करो कहा जाता है।

3 साम्यवाद खुलकर वर्ग संघर्ष का प्रयत्न करता है, समाजवाद अप्रत्यक्ष रूप से तथा पूंजीवाद आंशिक रूप से।

4 लोकतंत्र मे संगठन वर्ग संघर्ष का आधार होता है और वर्ग संघर्ष विभाजन की स्थितियां पैदा करता है।

5 मुसलमान चाहे जिस देश मे रहे वह संगठन भी बनायेगा ही और वर्ग विद्वेष बढाकर विभाजन भी करायेगा ही । विभाजन उसका लक्ष्य होता है मजबूरी नही।

6 हिन्दू कभी संगठन नही बनाता और यदि अन्य लोग संगठित हो तब भी वर्ग समन्वय का प्रयत्न करता है।

स्वतंत्रता के बहुत पूर्व धर्म के आधार पर राजनैतिक संगठन की शुरूआत मुस्लिम लीग और हिन्दू महासभा ने की । किसने किसकी प्रतिक्रिया मे की यह अलग विषय है किन्तु लगभग साथ साथ दोनो बातें उठी । एक तीसरी शक्ति के रूप मे संघ आया और चौथी शक्ति के रूप मे गांधी। हिन्दू महासभा की यह मान्यता थी कि भारत हिन्दू राष्ट होना चाहिये। मुसलमान इसके विरोधी थे और मुस्लिम राष्ट्र का सपना देख रहे थे। उनका मानना था कि भारत की सत्ता मुस्लिम राजाओ से अंग्रेजो ने छीनी है इसलिये मुसलमानो का उस पर पहला अधिकार है। हिन्दू महासभा का मानना था कि हिन्दुओ से मुसलमानो और मुसलमानो से अंग्रेजो ने सत्ता छीनी इसलिये भारत की सत्ता पर मूल रूप से हिन्दुओ का अधिकार है। संघ ने बीच का मार्ग अपनाया और माना कि अंग्रेजो की तुलना मे मुसलमान अधिक घातक हैं इसलिये सारा विरोध मुसलमानो के खिलाफ केन्द्रित होना चाहिये। गांधी का मानना था कि हम पहले अंग्रेजो की गुलामी से मुक्त हो जाये और शासन व्यवस्था लोकतांत्रिक हो जिसमे हिन्दू मुसलमान का वर्गीकरण न करके या तो प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार हो या यदि मजबूरी हो तो वर्ग समन्वय हो वर्ग संघर्ष नही। इस चार समूहो मे से किसी भी समूह ने किसी के साथ कोई समझौता नही किया और चारो अलग अलग तरीके से सक्रिय रहे। आर्य समाज कभी संगठन नही रहा बल्कि संस्था के रूप मे रहा। यही कारण था कि आर्य समाज ने मुसलमानो को छोडकर शेष तीनो से मिलकर स्वतंत्रता संघर्ष का साथ दिया तथा स्वतंत्रता के बाद भी आर्य समाज ने अपने को सत्ता संघर्ष से अलग कर लिया। स्वतंत्रता संघर्ष मे संघ लगभग निर्लिप्त रहा इसलिये उसने अपने को सांस्कृतिक संगठन घोषित कर लिया । लेकिन सतर्कता पूर्वक संलिप्तता संता के मामले मे इस तरह रही कि मुसलमान किसी भी रूप मे कमजोर रहे।गांधी के लिये स्वतंत्रता पहला लक्ष्य था तो हिन्दू महासभा के लिये हिन्दू राष्ट और संघ के लिये मुस्लिम सत्ता मुक्त भारत। इसी बीच अम्बेडकर के रूप मे एक पांचवे समूह का उदय होता है और उसने आदिवासी हरिजन को एक वर्ग बनाकर अलग सत्ता की मांग शुरू कर दी। विभाजन रोकने के लिये गांधी अम्बेडकर की उस मांग से ऐसा समझौता करने को मजबूर हुए जो आजतक भारत की अखंडता की कीमत चुका रहा है। गांधी चाहते थे कि जिन्ना और पटेल के बीच भी कोई समझौता हो जाये किन्तु दोनो अपनी अपनी जिद पर अडे थे। जिन्ना विभाजन के अतिरिक्त कुछ मानने को तैयार नही थे तो पटेल मुसलमानो को अलग वर्ग के रूप मे भी नही मानना चाहते थे । पटेल किसी भी रूप मे मुसलमानो को किसी तरह का विशेष महत्व नही देना चाहते थे भले ही विभाजन क्यो न हो जाये । गांधी को छोडकर राजनैतिक स्वरूप के जितने भी लोग स्वतंत्रता संघर्ष मे शामिल थे उनमे से कोई भी ऐसा नही निकला जिसने विभाजन का विरोध करने मे गांधी का खुंलकर साथ दिया हो। विभाजन मे अंग्रेजो की भी रूचि थी। हिन्दू मुस्लिम आदिवासी संघर्ष समाप्त न हो इसलिये वे भी अप्रत्यक्ष रूप से सबकी पीठ थपथपाते थे। अंतमे सत्ता लोलुप नेहरू पटेल अम्बेडकर तथा अन्य सबने मिलकर विभाजन स्वीकार कर लिया । स्पष्ट है कि

विभाजन की नींव वर्ग निर्माण से शुरू हुई थी और यह वर्ग निर्माण भारत मे मुसलमानो के द्वारा प्रारंभ किया गया। इसलिये विभाजन का सबसे बडा दोषी तो जिन्ना को ही माना जाना चाहिये। इसी तरह विभाजन का एक मात्र विरोधी सिर्फ गांधी को माना जाना चाहिये क्योकि वे किसी भी रूप मे विभाजन के विरोधी थे। यदि बीच के पटेल नेहरू और अम्बेडकर की बात करे तो इन सबकी विभाजन के प्रति पूरी सक्रियता रही। कांग्रेस पार्टी मे सरदार पटेल का बहुमत था और नेहरू को पता था कि गांधी जी नेहरू को ही प्रधान मंत्री स्वीकार करेंगे । अम्बेडकर आगे स्वतंत्रता के बाद राजनैतिक सत्ता के सपने देख रहे थे और तीनो ने मिलकर अन्य सबकी सहमति ले ली जिसके कारण गांधी भी विभाजन के लिये मजबूर हो गये।

राजनैतिक सत्ता बहुत चालाक होती है । वह षणयंत्र स्वयं करती है और दोषारोपण दूसरे पर करती है। वह अपने चाटुकारो को प्रचार माध्यमो मे लगाकर वे गुनाह को गुनाहगार प्रमाणित कर देती है। संघ स्वतंत्रता के पूर्व भले ही निर्लिप्त रहा हो किन्तु राजनैतिक सत्ता से उसकी दूरी कभी रही नही । स्वतंत्रता के बाद पाकिस्तान अलग हुआ और भारतीय सत्ता पर संघ की पकड मजबूत हो इसके लिये विभाजन का दोषी गांधी को सिद्ध करना आवश्यक था। संघ ने जान बूझकर गांधी को टारगेट किया क्योकि गांधी की छवि उसके संगठित वर्ग निर्माण मे बहुत बडी बाधा थी। गांधी सैद्धान्तिक रूप से हिन्दू थे जबकि संघ संगठित हिन्दुत्व का पक्षधर रहा। 13 कोई भी वर्ग कभी नही चाहता कि वर्ग समन्वय की बात मजबूत हो। जबतक वह कमजोर होता है तो न्याय की बात करता है और मजबूत होता है तब व्यवस्था की बात करता है। इसलिये संघ ने गांधी के जीवित रहते से लेकर आज तक बेगुनाह गांधी को विभाजन का दोषी प्रमाणित करने मे अपनी सारी ताकत लगा दी और विभाजन के प्रमुख दोषी सरदार पटेल को साफ बचा लिया। कांग्रेस पार्टी सत्ता लोलुप थी। नेहरू स्वयं गांधी की छवि का लाभ उठाना चाहते थे किन्तु गांधी की विचार धारा से उनका जीवन भर विरोध रहा । इसलिये कांग्रेस पार्टी ने संघ के इस गांधी विरोधी प्रचार से अपने को किनारे कर लिया। गाधीवादी धीरे धीरे साम्यवादियो के चंगुल मे फंस गये इसलिये वे संघ का विरोध करते रहे किन्तु गांधी विचारो का समर्थन नही कर सके। विभाजन मे गांधी की भूमिका विरोधी की थी यह बात स्पष्ट करने वाला कोई नही बचा था इसलिये विभाजन का सारा दोष निर्दोष व्यक्ति पर डाल दिया गया।

यदि आज भी भारत पाकिस्तान बंगलादेश को एक राष्ट्र के रूप मे मान लिया जाये और सबको समान मतदान का अधिकार दे दिया जाये तो सबसे ज्यादा विरोध संघ की ओर से आयेगा। भारत के मुसलमान इससे पूरी तरह सहमत हो जायेगे। आज अखंड भारत का लगातार राग अलाप रहे संघ के लोग अब एक भारत कभी नही चाहेंगे क्योकि वर्तमान मे सोलह प्रतिशत की मुस्लिम आबादी यदि इतनी बडी समस्या के रूप मे बनी हुई है और पाकिस्तान बंगलादेश मिल जाने के बाद यह आबादी पचीस प्रतिशत होगी तब शक्ति संतुलन और बिगड सकता है। इसलिये अखंड भारत का नारा संघ परिवार का नाटक मात्र है और कुछ नही।

मै इस मत का हूँ कि अब विभाजन का दोषी कौन इसकी खोज बंद कर देनी चाहिये और यह खोज तभी बंद हो सकती है जब इसके वास्तविक दोषी को सामने खडा कर दिया जाये जिससे विभाजन विरोधी गांधी पर आक्रमण अपने आप बंद जो जाये और यह चर्चा पूरी तरह समाप्त हो जाये। मै स्पष्ट हूँ कि यदि वर्ग निर्माण और संगठनो की मान्यता को अब भी नही रोका गया तो नये विभाजनो का खतरा बना रहेगा । भविष्य मे विभाजन न हो इसका सिर्फ एक ही समाधान है और वह है समान नागरिक संहिता । सबको मिलकर इस दिशा मे काम करना चाहिये।

मंथन क्रमांक – 99 पुलिस सकियता कितनी उचित कितनी अनुचित?

कुछ सर्वस्वीकृत सिद्धान्त है।

1. राज्य का दायित्व प्रत्येक नागरिक को सुरक्षा और न्याय प्रदान करने की गारंटी होता है। राज्य के अन्तर्गत काम कर रही पुलिस सुरक्षा की गारंटी देती है तो न्यायपालिका न्याय की।
2. सुरक्षा और न्याय पूरा होने के लिए आवश्यक है कि पुलिस और न्यायालय एक–दुसरे के पूरक और समन्वयक हो।
3. यदि न्यायपालिका न्याय देने में असफल हो जाती है तब पुलिस की मजबूरी हो जाती है कि वह सुरक्षा देने के लिए असंवैधानिक तरीकों का भी प्रयोग करे।
4. वर्तमान भारत में न्यायपालिका न्याय देने में भी असफल है और पुलिस के काम में निरंतर बाधा भी पहुँचाती है।

5. न्याय और सुरक्षा देना राज्य का लक्ष्य होता है और कानून उसका मार्ग। यदि कानून का पालन कराना लक्ष्य मान लिया गया तो अव्यवस्था निश्चित है।
6. यदि न्याय और कानून के बीच दूरी बढ जाती है तब कानून की समीक्षा की जाती है न्याय की नहीं।
7. लोकतंत्र में विधायिका न्याय को परिभाषित करती है न्यायपालिका उस परिभाषा के अनुसार समीक्षा करती है और कार्यपालिका इसे क्रियान्वित करती है।
8. समाज में अपराधियों में पुलिस का भय होना चाहिए और निरपराध लोगों में विश्वास होना चाहिए। वर्तमान समय में उलटा हो रहा है।
9. सूचना और शिकायत में अंतर करने की आवश्यकता है। न्यायपालिका इन दोनो के बीच का फर्क और उसके कारण बढ रही अव्यवस्था के वि ाय में नही सोचती।

पिछले 70 वर्षो में न्यायपालिका ने समाधान कम किए और समस्याएं अधिक पैदा की। न्यायपालिका को समझना चाहिए था कि वह कानून के अनुसार न्याय घोषित करने तक सीमित है न्याय को परिभाषित विधायिका करती है और क्रियान्वित कार्यपालिका। न्यायालय न्याय को परिभाषित करने पर भी सक्रिय हो गया और क्रियान्वित करवाने में भी। न्यायालय यह सिद्ध करने में जुट गया कि भारतीय लोकतंत्र में न्यायपालिका सर्वोच्च होती है जबकि यह सोच पूरी तरह गलत है। परिणाम हुआ कि अपराधियों को या तो दंड मिलने में विलम्ब होने लगा या दंड महत्वहीन हुआ। परिणाम हुआ कि भारत की आम जनता में प्रत्यक्ष हिंसक और अराजक दंड देने के प्रति विश्वास बढ रहा है। इन परिस्थिति को देखते हुए पुलिस विभाग भी सुरक्षा देने के लिए सक्रिय हुआ। उसमे भी अपराधियों को पकड–पकड कर अवैधानिक तरीके से मारना शुरू हुआ क्योंकि पुलिस के लिए न्याय की तुलना में सुरक्षा अधिक महत्वपूर्ण है और यदि न्यायालय पुलिस के कार्य में लगातार बाधक बनता है तो पुलिस के समक्ष इसके अतिरिक्त कोई अन्य मार्ग नहीं बचता की वह झूठ का सहारा लेकर अपराधियों को सीधे दंडित करने का प्रयास करे। सोहराबुद्दीन हत्या इशरत जहां का प्रकरण स्पष्ट उदाहरण है जब पुलिस ने इस प्रकार की सुरक्षा के लिए गैरकानूनी कार्य किए और सम्पूर्ण समाज का विश्वास अर्जित किया भले ही न्यायालय ने उसमें कितने भी रोड़े अटकाये हो। पंजाब में आतंकवाद को समाप्त करने के लिए पुलिस की अतिसक्रियताही कारगार हो सकी। छत्तीसगढ के नक्सल प्रभावित उत्तरी हिस्से को नक्सलवाद से मुक्त करवाने में भी पुलिस की अतिसक्रियता की महत्वपूर्ण भूमिका बताई जाती है। जिस पुलिस अफसर ने यह कार्य किया उसे आज भी उस क्षेत्र के लोग भगवान सरीखे मानते है। उत्तर प्रदेश में पिछले एक वर्ष में पुलिस की अतिसक्रियता के कारण जितने अपराधी मारे गये है उस आधार पर पुलिस की विश्वसनीयता बढी है।

मैंने पुलिस की अतिसक्रियता के अच्छे भी परिणाम देखे है और बुरे भी। महाराष्ट्र के एक न्यायालय से एक बडे अपराधी को बाहर निकाल कर कुछ महिलाओं ने हत्या कर दी थी उन महिलाओं को बहुत प्रशंसा मिली। इसी तरह अम्बिकापुर शहर में महिलाओं का चैन लूटकर भाग रहे पेशेवर लूटेरो को एक बार पकडे जाने पर भीड ने उनमें एक की पीट–पीट कर हत्या कर दी। पकडने वाले को वहॉ के नागरिकों ने और पुलिस विभागों ने भी सम्मानित किया। एक विपरीत घटना में हमारे जिले में एक व्यक्ति अपनी पत्नी को पीछे बैठाकर मोटर साइकिल से जा रहा था स्पीड ब्रेकर के उछलने के कारण पत्नी गिरकर मर गयी और पुलिस ने उस मामले में उस मोटरसाइकिल चालक पति पर मुकदमा कर दिया। कुछ ही वर्ष बीते है कि यदि आज महाराष्ट्र और अम्बिकापुर की कानून तोडकर भीड द्वारा दिए गए दंड की आज समीक्षा हो तो कुछ वर्ष पूर्व जिन्हें सम्मानित किया गया था आज लिचिंग के अपराध में हत्या का मुकदमा झेल रहे होते। समझ में नही आता कि न्याय की परिभाषा सुविधानुसार बदली जा रही है। यदि कोई अपराध होता है और अपराध के पीछे कोई व्यक्तिगत उद्देश्य नहीं है, भूल है या उद्देश्य जनहित है तो ऐसे कार्य को गैरकानूनी माना जाना चाहिए अपराध नहीं। दोनों के दंड में भी अंतर होना चाहिए। एक पुलिस वाले ने जनहित की भावना से किसी अपराधी की हत्या कर दी या भूल से किसी निर्दोष की हत्या कर दी तथा यदि व्यक्तिगत स्वार्थ के आधार पर किसी अपराधी या निर्दोष की हत्या कर दी तो यह तीनों घटनाएं भिन्न–भिन्न परिणाम रखती है। कानून और न्यायालय को इन सब में भिन्नता देखनी चाहिये। आश्चर्य होता है कि न्यायपालिका इतने स्पष्ट अंतर को भी नहीं समझ पाती। गैरकानूनी और अपराध बिल्कुल अलग–अलग होते है और अलग–अलग समझे जाने चाहिये। अपराध में अपराधी की नीयत अवश्य परिभाषित होनी चाहिए किन्तु हम देखते है कि जो न्यायालय बीस–तीस हत्याएं करने के बाद भी अपराधी को दंडित नहीं कर पाती या निर्दोष घोषित कर देता है उस अपराधी

को कोई पुलिस वाला अवैध तरीके से मार दे तब न्यायिक सक्रियता देखते ही बनती है।विचित्र स्थिति है कि भारत में अनेक अपराधियों ने हत्या और अपराध को अपना व्यवसाय बना लिया है। भारत की न्यायपालिका को ऐसी खुली हुई दुकाने कभी विचलित नहीं करती। उसकी प्राथमिकता क्या है? न्यायपालिका तो लिचिंग रोकना अथवा बलात्कार को रोकना सबसे अधिक प्राथमिक कार्य समझती है। पेशेवर अपराधी भले ही दंडित न हो किन्तु किसी अल्पवयस्क कन्या के साथ किए गए बलात्कार के लिए न्यायालय बहुत सक्रिय हो जाता है और 40 दिन में फॉसी का आदेश देकर अपनी पीठ थपथपाता है। मैं स्पष्ट हूॅ कि न्यायपालिका को अपनी प्राथमिताएं समझनी चाहिये। अपराधियों की खुली दुकाने सम्पूर्ण भारत के लिए बहुत बडा कलंक है। जिन पर आजतक कोई नियंत्रण नहीं होता है।

लोकतंत्र में कोई एक इकाई व्यवस्था की ठेकेदार नहीं होती। 20–30 वर्ष पूर्व विधायिका अपने को ठेकेदार समझने लगी थी और पिछले कुछ वर्षो से न्यायपालिका समझने लगी है, दोनो ही गलत है। न्यायपालिका को अपना काम छोड कर जनहित याचिकाएं निपटारा करने में मजा आने लगा है। परिणाम हुआ कि पुलिस को भी न्यायालय से हटकर सीधा न्याय देने में मजा आना शुरू हो गया है। यह टकराव पूरी तरह घातक है लेकिन इस टकराव में न्यायपालिका की भूमिका बहुत अधिक गलत दिखती है। अपराधी पुलिस के सामने सरेंडर करने की अपेक्षा न्यायालय के पास जाना अधिक सुरक्षित समझने लगे है। अपराधियों में पुलिस का भय घट रहा है और न्यायपालिका पर विश्वास बढ रहा है। यह अच्छी स्थिति नहीं है। न्यायपालिका को अच्छी तरह समझना चाहिये कि अपराध नियंत्रण में उसकी भी भूमिका एक सहयोगी की है। न्यायपालिका सिर्फ व्यक्ति पुलिस के बीच पूरी तरह तटस्थ भूमिका में नहीं रह सकती। यह सिद्धान्त भी गलत है कि जब तक कोई व्यक्ति न्यायालय द्वारा अपराधी सिद्ध न हो जाये तब तक वह निर्दोष है। होना तो यह चाहिए कि यदि पुलिस किसी व्यक्ति को अपराधी सिद्ध कर देती है तो वह व्यक्ति निर्दोष न होकर संदिग्ध अपराधी है। उसे निर्दोष नहीं माना जाना चाहिये। यदि कोई असम्बद्ध व्यक्ति कोई शिकायत करता है तो न्यायालय का कर्तव्य है कि वह उस शिकायत को सूचना समझकर कार्यवाही करे शिकायत समझ कर नहीं। वर्तमान समय में ऐसी सूचनाओं को शिकायत मान लेने के कारण अनेक ऐसे परजीवी व्यक्ति या संगठन खडे हो गये है जिनका ऐसी शिकायत करना एक व्यवसाय बन गया है और वे दिन रात न्यायालय के इर्द–गिर्द रहकर ही अपनी रोजी–रोटी चलाते है।

पुलिस की अतिसक्रियता एक अल्पकालिक मजबूरी हो सकती है किन्तु पुलिस को ऐसी भौतिक या नैतिक छूट नहीं दी जा सकती कि वह अपना काम छोडकर जनहित का काम करने लग जाए। इस समस्या का सिर्फ एक ही समाधान है कि न्यायालय स्वयं को न्याय तक सीमित कर ले तथा सुरक्षा और न्याय के बीच खीचतान को समाप्त करके दोनों में समन्वय करे। यदि कानून और न्याय मिलकर एकाकर हो जाऐगे पुलिस की सक्रियता अपने आप बंद हो जाऐगी अथवा सब मिलकर उसे अपनी सक्रियता छोडने के लिए मजबूर कर देगे।

बजरंग मुनि सामाजिक शोध संस्थान के राष्ट्रीय प्रबंध कार्यालय का शुभारंभ ऋषिकेश उत्तराखण्ड

ऋषिकेश में ''बजरंग मुनि सामाजिक शोध संस्थान'' के राष्ट्रीय प्रबंध कार्यालय का शुभारंभ हुआ। समाज सशक्तिकरण अनेक समस्याओं का समाधान करने में सफल होगा और यह तभी संभव होगा जब समाज में विवेकशील और समझदार लोगों की संख्या बढ़ेगी। यह बात देश के प्रख्यात मौलिक सामाजिक विचारक श्री बजरंग मुनि जी ने ऋषिकेश में ''बजरंग मुनि सामाजिक शोध संस्थान'' के राष्ट्रीय प्रबंध कार्यालय के शुभारंभ के अवसर पर कही।

बजरंग मुनि जी ने कहा कि यदि हम पूरे विश्व की समीक्षा करते हैं तो पाते हैं कि जितनी तेजी से दुनियां में भौतिक विकास हो रहा हैं लगभग उतनी ही तेज गति से नैतिक पतन भी हो रहा है। भौतिक समस्याओं का समाधान हो रहा है और चारित्रिक पतन की समस्याएं विस्तार पा रही हैं। भावना और बुद्धि के बीच भी अंतर बढता जा रहा है। जिस अनुपात में पूरी दुनियां में शरीफ लोगों की संख्या बढ रही है उसी अनुपात में समाज और दुनियां में चालाक और धूर्त लोगो की संख्या भी बढ रही है। इन दोनों के बीच मे बहुत तेजी से धुव्रीकरण हो रहा है। इसके विपरीत समाज में निरंतर

समझदारी घट रही है। हर धूर्त का यह प्रयास होता है कि अन्य लोग समझदार न होकर शरीफ बने अर्थात भावना प्रधान हो ताकि वो उनको ठग सके। सरसरी निगाह से देखे तो हम पाते हैं कि विचार–प्रचार बहुत तेज गति से हो रहा है और विचार–मंथन की प्रक्रिया लगातार घट रही है। जिसके परिणामस्वरूप विपरीत विचारो के लोग अलग–अलग गिरोहों मे बंटकर संगठित हो रहे है। ये विपरीत विचारो के लोग न तो एक साथ बैठते हैं और न कभी समस्याओं की चर्चा करते है। समाधान खोजने की बात तो तब आयेगी जब एक साथ बैठेंगे और चर्चा करेंगे। यहां तक कि पूरे विश्व में विपरीत विचारों के लोग एक–दूसरे के विरूद्ध बिना विचार किये इतने अधिक सक्रिय हो जाते है कि उसका लाभ धूर्त उठाते है।

भारत की स्थिति भी इससे कुछ भिन्न नहीं हैं। बल्कि जब हम भारत की समीक्षा करते हैं तो पाते हैं कि भारत दुनियां की तुलना में कुछ अधिक ही समस्याग्रस्त है, जहाँ राज्य और समाज के बीच शक्ति–संतुलन मालिक और गुलाम सरीखा हो गया है। सभी प्रकार के धूर्त राज्य के साथ निरंतर जुडने का प्रयास कर रहे है तो सभी शरीफ समाज के साथ इकठ्ठे हो रहे है। राज्य सुरक्षा और न्याय न देकर भौतिक उन्नति को अधिक महत्व दे रहा है। सुरक्षा और न्याय की परिभाषाएं बदली जा रही है। मानवाधिकार के नाम पर अपराधियों को विशेष सुरक्षा दी जा रही है तो न्याय के नाम पर कमजोरों और मजबूतों के बीच टकराव बढाया जा रहा है। परिणाम स्वरूप समाज के शरीफ लोगो द्वारा सुरक्षा और न्याय के लिये अपराधियों की मदद लेना मजबूरी बन गयी है। राज्य पूरी शक्ति से वर्ग समन्वय को समाप्त करके वर्ग निर्माण, वर्ग विद्वेष व वर्ग संघर्ष को प्रोत्साहित कर रहा है। धर्म–जाति–भाषा–क्षेत्रियता–उम्र–लिंग, गरीब–अमीर, किसान–मजदूर, शहरी–ग्रामीण आदि के नाम पर समाज मे अलग–अलग संगठन बनाकर उनमे वर्ग विद्वेष का कार्य योजना बद्ध तरीके से राज्य कर रहा है। शिक्षा और ज्ञान के बीच भी लगातार असंतुलन पैदा किया जा रहा है। शिक्षा को योग्यता का विस्तार न मानकर रोजगार के अवसर के रूप में बदलने का लगातार प्रयास हो रहा है। परिणाम यह हो रहा है कि शिक्षा और श्रम के बीच असंतुलन बढता जा रहा है। पूरे भारत मे हिंसा के प्रति विश्वास बढता जा रहा है। आज अनेक असत्य धारणाएं सत्य के समान स्थापित हो रही है। समाज, राष्ट्र और धर्म में कौन अधिक महत्वपूर्ण है, शिक्षा और ज्ञान में क्या अंतर है, अपराध गैर–कानूनी और अनैतिक में क्या अंतर है, कार्यपालिका और विधायिका में क्या अंतर है आदि–आदि का जवाब अच्छे–अच्छे विद्वान नहीं दे पा रहे हैं। स्पष्ट है कि समस्याएं दिख रही है और समाधान नहीं दिख रहा। समस्याओं का अंबार लगा है। समाधान कहां से शुरू करें यह समझ मे नही आ रहा ।

इन सब परिस्थितियों का ऑकलन करके ही बासठ वर्ष पूर्व मैंने अपने कुछ मित्रों के साथ रामानुजगंज शहर मे ज्ञान–यज्ञ की शुरुआत की जो अब तक सफलता पूर्वक जारी है। जिस समय रामानुजगंज में ज्ञान यज्ञ का कार्यक्रम शुरू किया गया था उस समय यह सोचा गया था कि एक शहर यदि समस्याओ के समाधान मे आगे बढकर आदर्श प्रस्तुत करेगा तो अपने आप देश पर उसका प्रभाव पड़ेगा । रामानुजगंज शहर मे हमारे इस प्रयत्न को अच्छी सफलता भी मिली। वहां के लोगो को शराफत से आगे निकालकर समझदारी की ओर ले जाने में हम सफल हुए हैं। आज देश–काल–परिस्थिति की मांग हैं कि रामानुजगंज के ज्ञान यज्ञ के इस सफल प्रयोग का विस्तार राष्ट्रीय स्तर पर हो। हमारा प्रयास होना चाहिये कि हम वर्ग विद्वेष मे सक्रिय समूहो का विरोध न करके सामाजिक एकता की एक और अधिक बडी लकीर खींचे। इसका अर्थ हुआ कि हम जाति धर्म भाषा आदि के नाम पर बने संगठित समूहो का विरोध न करके एक संयुक्त समूह की ओर बढने का प्रयत्न करे जैसा रामानुजगंज मे प्रारंभ मे किया गया था। अर्थात ज्ञान यज्ञ के नाम से हर प्रकार के लोग एक साथ बैठने की आदत डाले । भले ही वे किसी भी संगठन या विचारधारा के सदस्य क्यो न हो।

बजरंग मुनि जी ने इस अवसर पर ज्ञान–यज्ञ किस तरीके से हो सकता हैं उसकी विधि पर मार्गदर्शन किया। उन्होंने कहा कि श्रद्धापूर्वक आधे घण्टे का यज्ञ अथवा किसी अन्य भावनात्मक धार्मिक कार्यक्रम से शुरूआत होनी चाहिये। सामान्यतः यह समय पूरे कार्यक्रम का एकछः से अधिक न हो । दो घंटा किसी एक पूर्व निश्चित विषय पर स्वतंत्र विचार मंथन होना चाहिये जिसमे भिन्न–भिन्न या विपरीत विचारो के लोग अपनी बात स्वतंत्रता पूर्वक कहने की हिम्मत कर सके और दूसरे लोग विपरीत विचारो को सुनने की अपनी सहन शक्ति जागृत कर सकें । अंतिम आधा घंटा मे स्वराज्य प्रार्थना तथा प्रसाद वितरण आदि का कार्य होता है। आयोजक अपनी श्रद्धा अनुसार धार्मिक क्रिया करने के लिये स्वतंत्र होता है। चर्चा का विषय भी चुनने के लिये आयोजक स्वतंत्र है। किन्तु वक्ता की स्वतंत्रता को किसी भी परिस्थिति मे बाधित नही किया जा सकता भले ही वह किसी की भावनाओ के विरूद्ध ही क्यो न हो। ज्ञान यज्ञ के बैनर तले कोई सामूहिक निष्कर्ष

निकालना प्रतिबंधित है । सब लोग व्यक्तिगत निष्कर्ष निकालने को स्वतंत्र हैं । ज्ञान यज्ञ के बैनर तले न कोई भी अन्य सक्रियता हो सकती है और न ही ही कोई योजना बन सकती है। अर्थात ज्ञान यज्ञ परिवार का सदस्य व्यक्तिगत रूप से अथवा अन्य बैनर तले बाढ सहायता, राष्ट्रीय संकट मे मदद या भूखो को भोजन आदि सेवा कार्य करने को स्वतंत्र है, किन्तु ज्ञान यज्ञ के नाम से ऐसा करना पूरी तरह प्रतिबंधित है। ज्ञान यज्ञ की केवल एक ही सक्रियता है कि भिन्न व विपरीत विचारो के लोग एक साथ बैठकर स्वतंत्रता पूर्वक विचार मंथन कर सके तथा भावना और बुद्धि के बीच विवेक एंव शराफत और चालाकी के बीच समझदारी का विस्तार हो सके। ज्ञान यज्ञ के माध्यम से समस्याओ को प्राकृतिक रूप से व अघोषित तरीके से कम करने की प्रणाली विकसित की जा सके। ज्ञान यज्ञ एक ऐसी ही सफल प्रणाली है जिसमे ज्ञान यज्ञ परिवार ने पूरे राष्टीय स्तर पर अपनी सक्रियता को बढ़ाया हैं। ज्ञान यज्ञ परिवार ने यह भी पाया हैं कि ऋषिकेश की देवभूमि चिंतन मनन एवं शोध के लिये एक उत्तम स्थान हैं । इन्ही सब बातों का ध्यान रखते हुये ही ज्ञान यज्ञ परिवार ने अपने शोध संस्थान का शुभारंभ ऋषिकेश से करने का निर्णय लिया हैं।

कार्यक्रम के संचालक डॉ राजे नेगी जी ने अपने प्रारम्भिक भाषण में कहा कि प्राचीन समय में भारत चिंतन मंथन के द्वारा निष्कर्ष निकालता था और दुनियां उस आधार पर चलती थी। गुलामी के बाद भारत में चिंतन मंथन बंद हो गया और भारत विचारों का आयात करने लगा। स्वतंत्रता के 70 वर्ष बीतने के बाद भी वैचारिक धरातल पर भारत आज भी गुलाम है। यहॉ तक कि हर वैचारिक मामले में भारत विदेशों की नकल कर रहा है। यह स्थिति बदलनी चाहिये और इसके लिये आवश्यक है कि भारत में समस्याओं के समाधान के लिये चिंतन मंथन की प्रक्रिया सशक्त हो। यह शोध संस्थान ज्ञान यज्ञ के माध्यम से देश भर में यह प्रयत्न करेगा कि विपरीत विचारों के लोग एक साथ बैठकर चिंतन करे, मंथन करे, और निष्कर्ष निकालें जो भारत सहित सारी दुनियां के लिये उपयोगी हो।

इस अवसर पर शोध संस्थान के निदेशक आचार्य पंकज जी ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि बजरंग मुनि दुनियां के एक ऐसे विचारक है जिन्होंने बचपन से ही मंथन प्रक्रिया के माध्यम से भारत तथा विश्वव्यापी समस्याओं के समाधान के निष्कर्ष निकाले। छत्तीसगढ के नक्सल प्रभावित रामानुजगंज शहर के किनारे घने जंगल और पहाड के बीच लगातार शोध करना और निष्कर्ष निकालना किसी सामान्य व्यक्ति के लिये असंभव सा कार्य दिखता है जो उन्होंने किया। उस समय की मध्य प्रदेश सरकार ने इस चिंतन प्रक्रिया को नक्सलवादी प्रयास घोषित कर कुचलने का प्रयास किया किन्तु उन्हें असफलता ही हाथ लगी।बजरंग मुनि जी प्रचार माध्यमों से दूर रहे। कुछ वर्ष राजनीति में रह कर उन्होंने यह समझ लिया कि राजनीतिक वातावरण एक समस्या मात्र है समाधान नहीं। वे पूरी तन्मयता से समस्याओं के समाधान खोजने में एकाग्र हो गये। आज उनकी उम्र 80 वर्ष हो रही है। उन्होंने अपने सारे चिंतन और निष्कर्ष समाज की समर्पित करके अकेले जीवन के अगले कुछ वर्ष ऋषिकेश की देव भूमि में बैठकर चिंतन मंथन और ज्ञान यज्ञ में लगाने का निर्णय किया है। शोध संस्थान उनके निष्कर्षो की समीक्षा करके चयनित महत्वपूर्ण निष्कर्षो पर सम्पूर्ण भारत में और विश्व में शोध कार्य के अवसर उपलब्ध करायेगा। इस अवसर पर अपने अध्यक्षीय भाषण में महामंडलेश्वर डॉ रामेश्वर दास जी ने उपस्थित जनसमूह को सम्बोधित करते हुये कहा कि यह एक सुनहरा अवसर ऋषिकेश की देवभूमि के माध्यम से देशवासियों को मिला है कि वे विवेकशील होकर समाज एवं राष्ट्र निर्माण में अपनी महती भूमिका निभाये। इसके साथ ही उन्होंने बजरंग मुनि सामाजिक शोध संस्थान के उज्जव भविष्य की कामना की। संस्थान का विधिवत शुभारंभ संस्थान के निदेशक आचार्य पंकज, महामंडलेश्वर डॉ रामेश्वर दास, प्रमोद कुमार वात्सल्य, एस के कपूर व ऋषिकेश नगरपालिका के निवर्तमान अध्यक्ष दीप शर्मा ने संयुक्त रूप से दीप प्रज्ज्वलित करके किया। श्री उत्तम असवाल के द्वारा सफलतापूर्वक आयोजित इस कार्यक्रम का संचालन ऋषिकेश ज्ञान यज्ञ परिवार के संयोजक डॉ राजे नेगी ने पूरे उत्साह व मनोयोग से किया।

सामयिकी

कुछ दिन पूर्व दिल्ली मे तीन बच्चे भूख से मर गये। पूरे देश मे तुफान खडा हुआ। प्रदेश सरकार से लेकर केन्द्र सरकार तक सक्रिय हुई। उच्चतम न्यायालय भी सक्रिय हो गया। ऐसा लगा जैसे भूख से न मरने की सरकार द्वारा गारंटी दी गई हो।

लगभग 35 वर्ष पूर्व हमारे शहर के पास एक पंडो भूख से मर गया। पूरी मध्य प्रदेश सरकार ने उस गांव मे कई दिनो तक कैम्प किया । मुख्य मंत्री कई बार आये । प्रधान मंत्री इंदिरा गांधी भी उसके परिवार से मिलने आयी। सुप्रीम कोर्ट ने भी हस्तक्षेप किया और आदेश दिया कि भविष्य मे यदि किसी प्रदेश का एक भी व्यक्ति भूख से मरेगा तो उस प्रदेश का मुख्य सचिव व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होगा। उस गांव से कुछ ही दूर बलरामपुर मे डाकुओ ने सोनी परिवार के दो सदस्यो की हत्या कर दी और सबकुछ लूट कर ले गये। यह घटना भी उसी समय की है किन्तु न कोई कलेक्टर आया न ही कोई विधायक और मुख्यमंत्री । केन्द्र सरकार का तो प्रश्न ही नही है। यह कार्य सिर्फ पुलिस पर छोड दिया गया । ऐसा लगा जैसे डकैती और हत्या उतना बडा संवैधानिक दायित्व नही है जितना बडा किसी एक व्यक्ति का भूख से मरना।

इस आधार पर हम विचार करें कि क्या भूख से होने वाली मृत्यु रोकना सरकार का बडा दायित्व है। हत्या बलात्कार और डकैती से भी बडा। मेरे विचार मे सरकार के दायित्व मे यह कार्य शामिल ही नही है। सरकार का दायित्व सिर्फ सुरक्षा और न्याय होता है शेष सभी कार्य सरकार के स्वैच्छिक कर्तव्यो मे शामिल है। निकम्मे लोग अपने दायित्व पूरे नही कर पाते और स्वैच्छिक कर्तव्यो को ही दायित्व प्रचारित करके अपनी पीठ थपथपाते रहते है। लोकतंत्र के तीन स्तंभ तथा मीडिया पूरे देश भर के बुद्धिजीवियो को यह समझाने मे सफल हो गया है कि सुरक्षा और न्याय से भी अधिक गंभीर समस्या भूख और कुपोषण है।

मै समझता हूॅ कि यह गलती जान बुझकर नही हो सकती है । भारत दूसरो की नकल करने के लिये प्रसिद्ध है । अपनी भारतीय सोच का कोई महत्व नही। विदेशो मे जन कल्याण को सुरक्षा और न्याय की तुलना मे अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है क्योकि वहां अपराध बहुत कम होते है। भारत मे अपराधो की बाढ आई हुई है। फिर भी हमारे नासमझ नेता सुरक्षा और न्याय की जगह अन्य अनेक प्रकार के नाटक करने को ही अपने दायित्व की इतिश्री मान लेते है जो उचित नही । मै चाहता हूॅ कि हम इस विषय पर गंभीरता से चर्चा करे कि सुरक्षा और न्याय की तुलना मे भूख से मरना कोई राजनैतिक विफलता का मापदंड नही हो सकता।

सामयिकी

बिहार के मुजफ्फर पुर और उत्तर प्रदेश के देवरिया मे अवैध वैश्यालय पकडे गये जो बालिका सुधार गृह के नाम से चलाये जा रहे थे। इन्हे समाज सुधार के नाम पर अनेक सरकारी सुविधाए भी प्राप्त थी। प्रदेश सरकारे बहुत सक्रिय हुई । केन्द्र सरकार और न्यायालय भी सक्रिय दिखा। ऐसा लगा जैसे कोई विशेष अपराध हो गया हो और पूरा समाज उस अपराध से शर्म भी महसूस कर रहा है और दूख भी।

मनुष्य की कुछ प्राकृतिक भूख होती है। उस भूख की पूर्ति के लिये जितने साधनो की आवश्यकता होती है उसकी मात्रा मे यदि भारी कमी की जाये तो मांग और पूर्ति के बीच बहुत अंतर आ जाता है। इस अंतर के कारण आवश्यकता और अपराध का बढना स्वाभाविक है। आप फांसी देकर इस प्रवृत्ति को नही रोक सकते । क्योकि यह प्राकृतिक आवश्यकता है कृत्रिम नही। यह दुनियां की एक मात्र ऐसी आवश्यकता है जिसमे एक ही क्रिया से दो अलग अलग व्यक्ति संतुष्ट होते हैं। इसमे दोनो एक दूसरे के पूरक होते है न कि कोई एक साधन होता है।

देश भर मे महिलाओ और पूरूषो के बीच इस प्राकृतिक आवश्यकता की पूर्ति मे कमी करने के लगातार प्रयत्न हो रहे है। वैश्यालयो पर अंकुश लग रहा है। शादी की उम्र बढाई जा रही है। भूख तीव्र होने के बाद भी बालिग घोषित नही किया जा रहा है। दूसरी ओर महिला और पूरूष के बीच दूरी घटाने से तथा भौतिक संसाधनो के बढने से भूख की मात्रा लगातार बढती जा रही है। परिणाम स्वरूप धर्म के नाम पर आश्रमो मे अथवा राजनैतिक सत्ता के माध्यम से अनेक प्रकार के नकली गुप्त वैश्यालय स्थापित हो रहे है। धनवान बनने का यह सहज सरल व्यवसाय बन गया है। जो कार्य स्वाभाविक रूप से 25–50 रूपये का था और उसमे किसी विचौलिये की आवश्यकता नही थी तथा जिस कार्य से किसी प्रकार का अपराध बोध नही होता था उसी कार्य के लिये अब दो चार सौ या हजार दो हजार रूपया भी खर्च हो रहा है। इस कार्य का अधिकांश हिस्सा बिचौलियो के पास जाता है तथा आपस मे दोनो पक्षो मे अपराध बोध भी होता है। महिला और पूरूष की शारीरिक इच्छाए अर्ध तृप्त भी रह जाती है। मै आज तक नही समझ सका कि ऐसा करने का क्या आधार है। जो धर्माचार्य अथवा सामाजिक राजनैतिक नेतृत्व के लोग ऐसे कार्यो का व्यवसाय करते है वे भी इस प्रकार के

कार्यो पर सरकार द्वारा प्रतिबंध लगाने की निरंतर मांग करते रहते है क्योकि उनकी मजबूरी होती है कि वे बहुत बढ चढकर अपने को निष्कलंक प्रमाणित करने का प्रयास करे। देश भर मे अनेक बुद्धिजीवियो ने समय समय पर मांग की है कि सरकार इन सब कार्यो से दूर हो जाये और जब तक स्पष्ट बल प्रयोग न हो तब तक कोई हस्तक्षेप न करे परन्तु सरकारे लगातार ऐसे प्रतिबंधो की मात्रा बढाती जा रही है परिणाम हो रहा है कि गांव गांव मे ऐसे अवैध वैश्यालय खुलते जा रहे है जो किसी मंदिर आश्रम या सामाजिक संस्थान के बैनर तले सक्रिय हो । मै अब भी चाहता हूॅ कि इस प्रकार के सारे प्रतिबंध समाप्त कर दिये जाये। नैतिकता को परिभाषित करना और मजबूत करना सरकार का काम नही समाज का काम है। सरकार अपने को अपराध नियंत्रण तक सीमित कर ले तो नैतिकता समाज के माध्यम से अपने आप सुरक्षित हो जायेगी।

प्रश्नोत्तर

1. चितरंजन भारती, पंचग्राम, असम

विचार–. 'ज्ञान तत्व' का 16–30 जून 2018 अंक मिला । 'मुस्लिम आतंकवाद' पर आपकी स्पष्टवादिता पढकर दंग रह गया। आपने सूक्ष्मतापूर्वक विश्लेषण कर 'मुस्लिम आतंकवाद' पर खरी–खरी कही है। आपने स्पष्ट निर्देशित किया है कि मुस्लिमों को धर्म एवं संगठन में से किसी एक का चुनाव करना होगा, तभी बचाव संभव है। इसी प्रकार जालसाजी व धोखाधडी पर अपना मंतव्य स्पष्ट किया है कि व्यक्ति को भावना और बुद्धि में सामंजस्य स्थापित करना चाहिए। आपके दिखाए रास्ते का ही सुपरिणाम है कि मैं कुछ सफलता पा सका, ठगी व धोखाधडी से बचा रह सका।

उत्तर–आप काफी समय से हम लोगों के साथ वैचारिक धरातल पर जुडे हुए है। आपसे प्रत्यक्ष मिलना अब तक नहीं हो पाया है किन्तु पत्र के माध्यम से मुलाकात होती रहती है। मेरे विचार आपके किसी उपयोग में आ सके इससे मुझे बहुत संतोष हुआ। आप जैसे व्यस्त विद्वान जब विचारों की समीक्षा करते है तो उससे मेरा भी उत्साह बढता है। इसी तरह हम आप लंबे समय तक जुडे रहें यही कामना है।

2. चतुर कोठारी, राजसमंद, राजस्थान

विचार– आप 'ज्ञान तत्व' परिवार सहित आंनद में होगे। 'ज्ञानतत्व' 374 मिला आभारी हूॅ। मंथन क्रमॉक–85 में 'मुस्लिम आतंकवाद' पर जिस सुन्दर ढंग से व्याख्या कर विश्लेषणात्मक ढंग से प्रकाश डाला, उसे पढकर निश्चय ही हर पाठक की ऑख खुली होगी। आपने इस निर्णय पर ठोस रूप से प्रकाश डाला कि चाहे अनैतिक मार्ग ही क्यों न अपनाना पडे पर मुस्लिम कट्टरवाद का भारत से खात्मा आवश्यक है। स्पष्ट मार्ग दर्शन के लिये आभार स्वीकार करें।

3. राजेन्द्र तिवारी 'भारतीय' इंदौर, मध्य प्रदेश

विचार– ज्ञान तत्व विगत 3–4 महिनों से नियमित मिल रहा है। आपके महत्वपूर्ण उपयोगी विचारों का लाभ ग्रहण कर अपनी सोच में तद्नुसार ढाल कर विचार प्रचार की जगह विचार मंथन का प्रयोग करने लगा हूॅ। मेरे मन में यह विचार विशे ा आता है कि आप विभिन्न संस्कृतियों, वादो, विचारों का विश्लेषण तो करते हैं, उनकी हितकर अहितकर बातें बताते हैं, परन्तु यह नहीं बताते कि उनकी तात्कालिक परिस्थितियॉ क्या थी? उनका उन पर क्या प्रभाव था? उस प्रभाव को उन्होंने स्वानुकूल ग्रहण किया या युगानुकूल ग्रहण कर स्व से जुडी बातों के समर्थन में किया या जनहित के विरूद्ध किया? आप विश्लेषण तो करते हैं पर जगत हित में उनकी हितकर बातों का समन्वय नहीं करते। यह नहीं बताते कि इन सबकी व्यापक जन जीवन में मान्यता या ग्राहयता कुछ समय या लंबे समय तक बल्कि आज तक क्यों बनी हुई है? कृपया मेरे मन की इस उलझन को सुलझकर संतोष प्रदान करें।

उत्तर– आपने मेरे विचारो में जो कमी लिखी है वह मेरी मजबूरी है। मैं इतिहास भूगोल के विषय में कुछ नहीं जानता इसलिए मैं ऐतिहासिक घटनाओं और उसकी परिस्थितियों की समीक्षा नहीं करता क्योंकि वह मेरी समझ के बाहर है। इस संबंध मैं यदि कोई उल्लेख भी करता हूॅ तो वह सुनी सुनाई बातों पर होता है। मैं समाज शास्त्र, राजनीति शास्त्र, अर्थ

शास्त्र और संविधान को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जितना समझ पाता हूॅ उतना ही लिख पाता हूॅ। कौन सी सामाजिक समस्या कब और किन परिस्थितियों प्रारंभ हुई वह एक कठिन विषय है । आप मेरी कमजोरी को समझें।

4. आनंद बिल्थरे, बालाघाट, मध्य प्रदेश

प्रश्न– क. अंक 374 (मंथन क्रमॉक–85) में आपके विचार प्रासंगिक हैं। मुस्लिम आतंकवाद धीरे–धीरे खतरनाक शक्ल अस्तियार करता जा रहा है। समानांतर न्याय व्यवस्था के अनुरूप अब पूरे देश में शरीयत कोर्ट खोलने की योजना चल रही है। क्या इस्लाम और साम्यवाद से निपटने का कोई और मार्ग नहीं है?

ख. अंक 375 (मंथन क्रमॉक–88) कर्मचारियों की तनखाह बढाते जाने का कोई औचित्य नही है। इससे न कार्य में गुणवत्ता का सुधार होगा न भ्रष्टाचार का। बेशुमार छुट्टियों ने वैसे ही प्रगति की गति रोक रखी है। आरक्षण अयोग्यता का घर बनती है और योग्यता में उपेक्षा की हीन भावना पनंप रही है। ऐसी विकलांग व्यवस्था से देश कितना आगे बढेगा, विचारणीय है।

ग. सुप्रीम कोर्ट के रिटायर्ड जज हेगडे ने कहा है कि कानून बनाकर बुराई खत्म नहीं की जा सकती। इसलिए उन्होंने कहा है कि वेश्यावृत्ति, जुआ और सट्टे को वैध किया जाना चाहिये। इसी तरह श्री जयंत मलैया, वित मंत्री एम.पी ने भी अमेरिकी विद्वान सैम हैरिस को उद्धरित करते हुये कहा है कि ऐसे (शराब) अपराध को पूरी तरह रोकना संभव नहीं है जिसमें खरीदने और बेंचने वाले दोनों सहमत तथा खुश हों। उन्होंने आगे कहा कि शराब की आय से कई कल्याणकारी योजनायें चल रही हैं। प्रतिबंध से आदिवासियों की भावनायें भी आहत होगी। इस संबंध में आप क्या सोचते है?

घ. न्याय और व्यवस्था के बीच संतुलन आवश्यक है। इसमें टकराव देश के हित में नहीं है।

ड. मैं, समान नागरिक संहिता का भी पक्षधर हूॅ।

च. प्रत्येक अंक में आपके विचार निष्पक्ष एवं संतुलित होते है तथा अपने लोगों के बीच में इस पर विचार विमर्श भी करता हूॅ।

उत्तर–शरीयत कोर्ट खोलने की योजना आंशिक रूप से तो नुकसानदायक है किन्तु उससे बहुत व्यापक रूप से घातक मानना ठीक नहीं है। क्योंकि वह एक प्रकार के सामाजिक पंचायत है और आपसी सहमति से निपटाने की योजना है। यद्यपि अप्रत्यक्ष रूप से उसमें धार्मिक दबाब भी रहेगा ही किन्तु फिर भी उसे विरोध का मुद्दा नहीं बनाया जा सकता। आरक्षण अयोग्यता का घर बनता जा रहा है और योग्यता में उपेक्षा की हीन भावना पनंप रही है यह बात कुछ हद तक ठीक है किन्तु साथ–साथ यह विचार करने की आवश्यकता है कि आरक्षण सिर्फ नौकरियों में और राजनैतिक पदो पर ही लागू है। यदि सत्ता में पावर कम कर दिया जाये और सरकारी नौकरियों में वेतन सामान्य कर दिया जाये तो आरक्षण अपने आप खत्म हो जायेगा। यह अवश्य होगा कि इस प्रस्ताव का वे सवर्ण विरोध करेंगे जो बुद्धिजीवी के रूप में ठेकेदार बनकर सारी सुख सुविधाएं अपने और अपने परिवार के लिए इकठ्ठी करते है। मांग यह होनी चाहिए कि बुद्धि और श्रम के बीच की दूरी घटे बुद्धिजीवियों का वेतन कम किया जाये और श्रम का मूल्य बढने दिया जाए। रिटायर्ड जज हेगडे ने जो कुछ कहा है उसमें कुछ भी नया नही है। यह बात में पचास वर्षो से निरंतर लिखता और बोलता रहा हूॅ। मुझे लगता है कि यह बयान हमारे बडे लोगो को रिटायरमेंट के बाद ही आता है। अच्छा हो कि हमारे देश के वर्तमान न्यायाधीश रिटायर्ड होने के पहले इस वि ाय पर कुछ सोचे और समझे।